आज़ादी की नुक्ती

बच्चों द्वारा लिखी गई कहानियों का संकलन

एकलव्य का प्रकाशन

कीर्ति चौहान, पाँच वर्ष, टिमरनी, होशंगाबाद, म.प्र.। चकमक मई, 1990 में प्रकाशित।

आज़ादी की नुक्ती

चकमक (जनवरी, 1989 से दिसम्बर, 1991) में प्रकाशित,
बच्चों की कहानियों का संकलन

एकलव्य का प्रकाशन

आज़ादी की नुक्ती

Aazadi ki Nukti

चकमक में प्रकाशित बच्चों द्वारा लिखी गई कविताओं का संकलन

© एकलव्य

पहला संस्करण: फरवरी, 1997
पहला पुनर्मुद्रण: फरवरी, 1999
दूसरा पुनर्मुद्रण: अगस्त, 2008/3000 प्रतियाँ
तीसरा पुनर्मुद्रण: अक्तूबर, 2010/3000 प्रतियाँ
70 gsm मेपलिथो व 170 gsm आर्ट कार्ड कवर
यह किताब मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार
एवं सर रतन टाटा ट्रस्ट के वित्तीय सहयोग से विकसित।

ISBN: 978-81-87171-12-6
मूल्य: ₹ 22.00

प्रकाशक: **एकलव्य**
ई-10, बीडीए कॉलोनी शंकर नगर,
शिवाजी नगर, भोपाल - 462 016 (म.प्र.)
फोन: (0755) 255 0976, 267 1017
फैक्स: (0755) 255 1108
www.eklavya.in
सम्पादकीय: **books@eklavya.in**
किताबें मँगवाने के लिए: **pitara@eklavya.in**

आवरण: समर युसुफ, नौ वर्ष, भोपाल, म.प्र.।
पिछला आवरण: हार्दिक, पहली, भावनगर, गुजरात।

मुद्रक: आर. के. सिक्युप्रिंट प्रा. लि., भोपाल फोन: (0755) 2687 589

आपस की बात

चकमक, एकलव्य द्वारा प्रकाशित मासिक पत्रिका है। चकमक का उद्देश्य बच्चों की स्वाभाविक अभिव्यक्ति, कल्पनाशीलता, कौशल और सोच को स्थानीय परिवेश में विकसित करना है।

'आज़ादी की नुक्ती' चकमक में प्रकाशित बच्चों द्वारा लिखी गई कहानियों का दूसरा संकलन है। पहला संकलन *'लोमड़ी और ज़मीन'* 1989 में प्रकाशित हुआ था। इसमें चकमक के प्रवेशांक जुलाई, 85 से दिसम्बर, 88 तक के अंकों से चुनी हुई कहानियाँ ली गई थीं। 'आज़ादी की नुक्ती' में इसके आगे यानी जनवरी 90, से दिसम्बर, 91 तक के अंकों से चुनी रचनाएँ ली गई हैं।

तीन कहानियाँ ऐसी हैं, जो पहले स्थानीय पत्रिकाओं बालचिरैया (पिपरिया) तथा बालकमल (देवास) में प्रकाशित हुईं और फिर चकमक में।

कुछ कहानियों के साथ वही चित्र लिए गए हैं जो चकमक में उनके साथ छपे थे या उसी अवधि के किसी अन्य अंक में। कुछ कहानियों के साथ नए चित्र छापे जा रहे हैं। मुख्य आवरण तथा पिछले आवरण पर भी नए चित्र प्रकाशित हो रहे हैं।

प्रत्येक रचनाकार व चित्रकार के नाम के साथ उसकी उम्र या कक्षा का उल्लेख है। यह उम्र या कक्षा रचना लिखते समय या चित्र बनाते समय की है।

कहानियों का चयन करते समय हमारी यह कोशिश रही है कि संकलन में शामिल रचनाएँ बच्चों की अपनी मौलिक अभिव्यक्ति प्रकट करने वाली ही हों।

❑ **एकलव्य समूह**

फ़रवरी, 1997

कौन-सी कहानी कहाँ!

साइकिल चलाई	1
हमने गुड़ खाओ	3
साँप ने सोचा	7
बीच की माँग	9
आज़ादी की नुक्ती	10
अगर गुरूजी न मारते	12
रंगीन चिड़ी	14
झूठी-मूठी	16
खेल खेल में	18
सुनील का सपना	20
रूमाल ने करवाया झगड़ा	22
अदल - बदल	24
गाय ने खाया काग़ज़	26
आम की खोज	28
न भूत लगा न प्रेत	32
शेर आया चाय पीने	34
बैठा आस लगाए ...	35
मन भर चीनी खाई	38
पतंग की करामात	40
फूल	41
धमबम, छमबम और हम	42
पागल कुत्ते से सामना	44
शेर से दोस्ती	47

साइकिल चलाई

❑ कृष्ण सिंह

एक दिन मेरे घर पर एक मेहमान आया। वह साथ में साइकिल भी लाया था। मैंने साइकिल देखी तो खुशी से झूम उठा। बाहर गया, साइकिल उठाई और थोड़ी दूर पैदल गया। वहाँ मुझे मेरे दोस्त मिले। उन्होंने कहा, "हम साइकिल पर बैठें?"

मैंने हाँ तो कर दी लेकिन मैं किसी सवारी को बैठाकर नहीं चला सकता था। एक को पीछे बैठाया, एक को आगे फिर मैं स्वयं बैठ गया और साइकिल चलाने लगा। रास्ता थोड़ा ढलान वाला था। साइकिल ज़ोर से चलने लगी। हमें बहुत मज़ा आ रहा था, तभी साइकिल का संतुलन बिगड़ गया। साइकिल का अगला पहिया एकदम पीछे घूम गया। वह पहिया अब इस

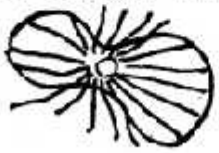

आकृति में बदल गया था। हम एक झटके से आगे जा गिरे।

हाथ पैरों में चोट आई सो तो अलग लेकिन मेरा तो सिर भी फूट गया। किसी तरह खून रोका और वे दोनों मित्र पहिए को ठीक करने में लग गए। बड़े पत्थर से ठोककर उन्होंने थोड़ा-थोड़ा सीधा कर लिया था परन्तु कुछ तो बेंड रह ही गया था।

आख़िर हिम्मत कर साइकिल घर ले जाकर उसी जगह रख दी और हम सब छिप गए एक खण्डहर में। थोड़ी देर बाद मेहमान बाहर आया, साइकिल लेकर चला गया। लेकिन यह क्या, वह गुस्से में वापस आया और मेरे पिताजी से कहा

कि उसकी साइकिल का एक पहिया बेंड हो गया है। हुआ यूँ कि वह कुछ दूरी पर गया और साइकिल पर बैठा तो पहिया इधर-उधर घूमने लगा।

पिताजी को जब यह पता चला कि यह हरकत हमने की है तब उन्होंने हमें ढूँढा और उस खण्डहर में पा लिया। मेरी हालत देखी तो मुझे तुरन्त अस्पताल ले गए। दस-पन्द्रह दिन बाद मैं ठीक हो गया। तब मैंने सारी घटना सुना दी। पिताजी ने मुझे साइकिल का इतना शौकीन देखा तो एक छोटी साइकिल ख़रीद दी और उसे चलाना सिखा दिया। ●

सुरेशराम

कृष्ण सिंह, बारह वर्ष, बरार, उदयपुर, राजस्थान। चकमक अप्रैल, 1991 में प्रकाशित। सुरेश राम, आठवीं, बरौंकला, म.प्र.।

हमने गुड़ खाओ

❑ मनमोहन तिलन्थे

एक दिन मैं उर (और) मेरो बड़ो भैया घर में थे। मेरी बाई घर में नईं थी। उर मेरे दाऊ बी (भी) घर में नई थे। वे खेत में काम रहे थे। दाऊ बखर हाँक रहे थे। उर बाई फर्रे बीन रईं थीं।

मेरो बड़ो भैया बोलो, "यार मनमोहन अपने घर की कुटिया में गुड़ धरो है। तू कोई से नै कहे तो अपन दोई खालेएं।"

मैने बी कई, "खालो भैया मनो मोहे भी मुतको दैयो।"

तई उन्ने कई, "हओ।"

हमने गुड़ निकारो उर खान लगे। अब उते से बाई आ रईं थीं। मैंने दूरई से देख लई।

मैंने भैया से कई, "ये देख तो भैया मोसे जो गुड़ तो खुवा नई रयो। जाहे तुमई खालो।"

तई बे बोले, "हओ।"

उर मैं गुड़ उनकी थरिया में धर के बाहर आ गयो। बड़े भैया ने तो बाई हे देखी नई थी। वे तो निरभय होके खा रए थे जैसेई बाई घर आईं मैंने कह दई, "ओ बाई बड़ो भैया घर में गुड़ खा रयो है।"

बाई बोली, "कहाँ है बो?"

तई मैंने कही, "वो तो देख लो घर में घुसो-घुसो खा रयो है।"

चेतन राँका

जैसेई बाई घर में गईं मैंने बड़े भैया के डर से कक्कू के घर की गैल धर लई। बाई ने बड़े भैया हे खूब गारी दईं।

वे बोलीं, "नासमिटे कच्छू नई बचन देवे। अबें गुड़-मुड़ बढ़ा गयो तो ओर कहाँ से लाहें। अब बजार है पूरे चार दिना बाद। चाय-माय काय की बन है। शक्कर बी तो कंटरोल में नईं मिली। काय रे तू रोटी नई खा सकत थो?"

अब भैया की मुइयाँ उतर गई, वे फुसफुसाके बोले, "मैंने अकेले ने थोरू खाओ है बाने बी तो खाओ है।"

तईं बाई बोली, "काय रे तू तो बड़ो है। जब तूने खाओ हुहै तब वो तो खै है।"

तब तक तो मैं धीरे-धीरे कक्कू के आँगन से बहार होके सब सुन रयो थो, फिर मैं बोलो, "ए बाई सुनो अब तुमई देखो मैंने खाओ होतो तो मैं तुमसे कह देतो।"

तई बाई बोली, "हाँ रे तू का कम है।"

मैंने मन में सोची मेरी सफाई काम नै आई उर मैं फिर कक्कू के घर चलो गयो।

कक्कूहुन को उर हमारो घर जोरे जोरे (पास-पास) तो थे ही। वे हमरी पूरी बातें सुन रए थे। उन्ने मोहे बुलाओ उर बोले, "यार मनमोहन हमें एक चरू पानी तो लान दो।"

मैं सहज भोरे चरू में पानी लेके पोंच गयो तब वे बैलों की सार में खटिया पे बैठे बैठे तमाखू बना रए थे। उन्ने चरू के संग में मेरो हाथ बी पकड़ लयो, उर मुस्काए के बोले, "तूने बी गुड़ खाओ थो सच्ची बता।" तई मैं हिनहिना के बोलो, "कक्कू जी मैंने तो तन्नक सो खाओ है।"

वे बोले, "खइए रामधई।"

तई मैंने बी बचबे के मारे रामधई (रामकमस) खा लई।

वे बोले, "तूने तन्नक सो खाओ होय चाय मुतको सो, खाओ तो है। तू तो बच गयो उर बो उते गारी खा रयो है।"

इत्ती बात केत हुए उन्ने मेरे गाल में एक थप्पड़ मारो। तो हमने गुड़ भी खाओ और थप्पड़ बी। ●

मनमोहन तिलन्थे, दसवीं, तवानगर, होशंगाबाद, म.प्र.। चकमक फ़रवरी, 1991 में प्रकाशित। चेतन राँका, बारह वर्ष, बदनावर, म.प्र.।

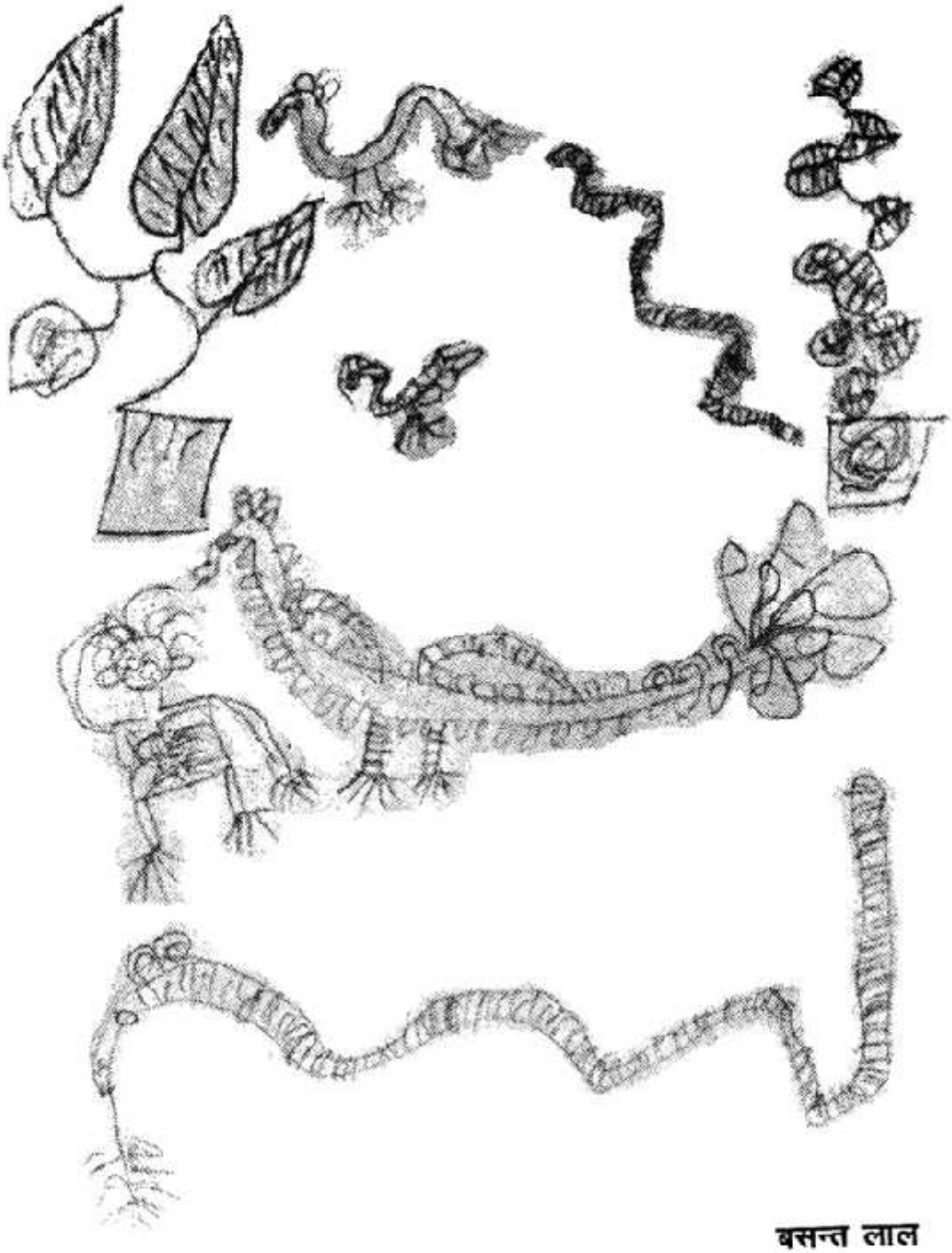

बसन्त लाल

साँप ने सोचा

❑ अशोक हुसैन

एक दिन एक साँप इधर-उधर घूमने निकला। साँप के सामने से एक लड़की आ रही थी। साँप ने सोचा मेरे पास ज़हर है लेकिन इस लड़की को काटूँ या नहीं! फिर साँप ने सोचा यह लड़की मेरी तरफ आ रही है तब तो आख़िर इसको काटना ही पड़ेगा।

लेकिन एक बात है जब इसको मैं काटूँगा, तो यह चिल्ला पड़ेगी। चिल्लाने की आवाज़ सुनकर लोग दौड़कर आ जाएँगे और मेरी जमकर सुताई कर देंगे। इससे अच्छा मुझे ही इस रास्ते को छोड़कर खिसक लेना चाहिए। और साँप दूसरा रास्ता पकड़कर चलता बना। ●

अशोक हुसैन, तीसरी, मानकुंड, देवास, म.प्र.। बालकलम (देवास) तथा चकमक सितम्बर, 1989 में प्रकाशित। बसन्त लाल, चौथी, फोफल्या, शाहपुर, बैतूल, म.प्र.।

नीरज बड़गैयाँ

बीच की माँग

❑ विप्लव उपाध्याय

एक बार जब मैं स्कूल गया तो मैंने देखा कि मेरे कुछ दोस्त बीच की माँग निकालकर आए थे। वे बहुत ही सुन्दर लग रहे थे। मैंने भी बीच की माँग निकालना शुरू कर दी। कुछ दिनों बाद यह बात मेरे पापा को मालूम हुई, तो उन्होंने मुझे समझाया कि, बेटा बीच की माँग तो आवारा लड़के निकालते हैं। पर मैंने फिर बीच की माँग निकालना शुरू कर दी। मुझे पापा ने ख़ूब समझाया, पर मैं नहीं माना। अन्त में पापा ने मेरी गंजी ही करवा दी। ●

विप्लव उपाध्याय, सातवीं, देवास, म.प्र.। चकमक जनवरी, 1991 में प्रकाशित।
नीरज बड़गैयाँ, नवमीं, पथरिया, दमोह, म.प्र.।

आज़ादी की नुक्ती

❑ राजनारायण दुबे

15 अगस्त के कारण हमने एक दिन पहले से कपड़े धो रखे थे। 15 अगस्त के दिन हमने सबेरे 5 बजे उठकर मुँह-हाथ धोए और नहाया। फिर हमने चाय पी और उसके बाद हम ड्रेस पहनकर, जूते-मौज़े पहनकर बढ़िया तैयार होकर स्कूल गए।

वहाँ हम थोड़े घूमे-फिरे और फूटे खाए। इतने में सर आ गए और कहने लगे चलो लाइन में लगो। हम लाइन में लग गए। एक मोड़ा हमरी लाइन में लगो। हमने बाके दो चार करारे हाथ जमाए। इत्ते में बो मासाब के पास पहुँच गओ। मासाब से बा ने कही कि मासाब मोहे एक मोड़ा ने मार दओ, तब मासाब मेरे पीछे दौड़े तई हमने भग दओ और सिंधी कालोनी की गलियों में घूमत रहे और बुद्धा के खेत में से हीट के गल्ले बाज़ार पहुँचे। भा पे भाषण भये। भाषण सुन-सुन के हमरो दिमाग पच गओ। भाषण खतम भये हम सब स्कूल आए। हम लाइन में लगे नुक्ती बँट रही थी।

फिर बोई मोड़ा मिल गओ। बो फिर हमसे उलझन लगो। हमने बाके इत्तो मारो इत्तो मारो कि बाहे बेहोश कर दओ। हमें एक पुड़िया नुक्ती मिली। उत्तीसी नुक्ती के पीछे हम दिन भर परेशान रहे और नुक्ती खात-खात घर आ गए। ●

राजनारायण दुबे, पिपरिया, होशंगाबाद, म.प्र.। बालचिरैया (पिपरिया) तथा चकमक फ़रवरी, 1990 में प्रकाशित। गोविन्द प्रसाद शर्मा, बालागुड़ा, मन्दसौर, म.प्र.।

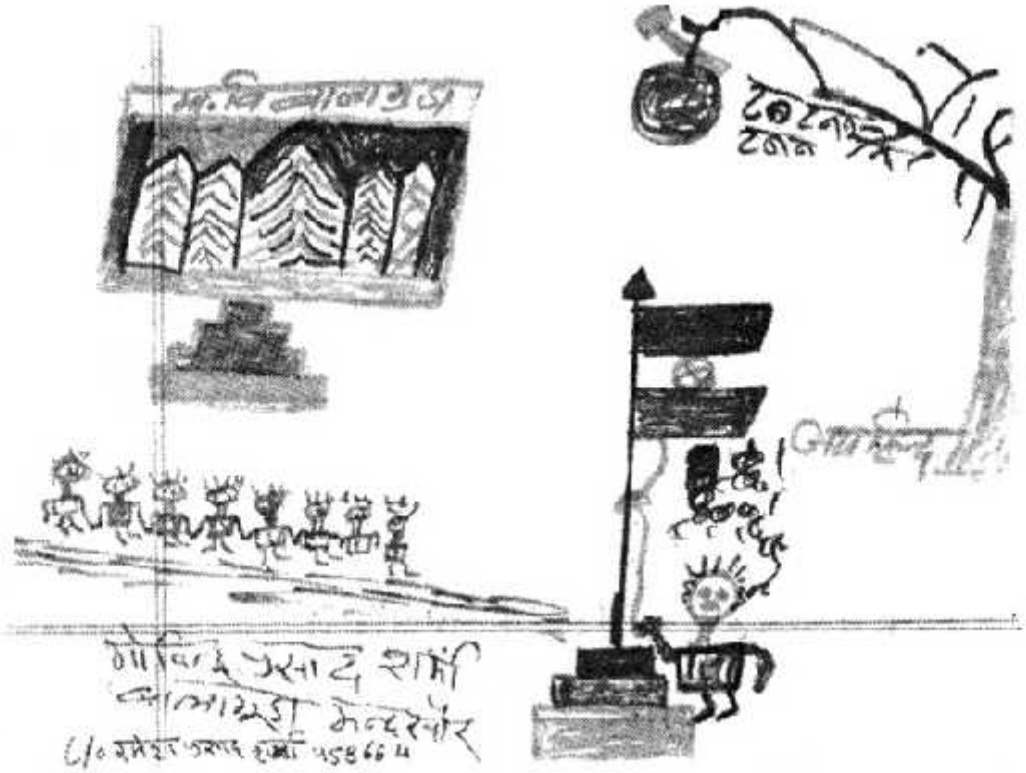

गोविन्द प्रसाद शर्मा

अगर गुरुजी न मारते!

❑ विनोद परमार

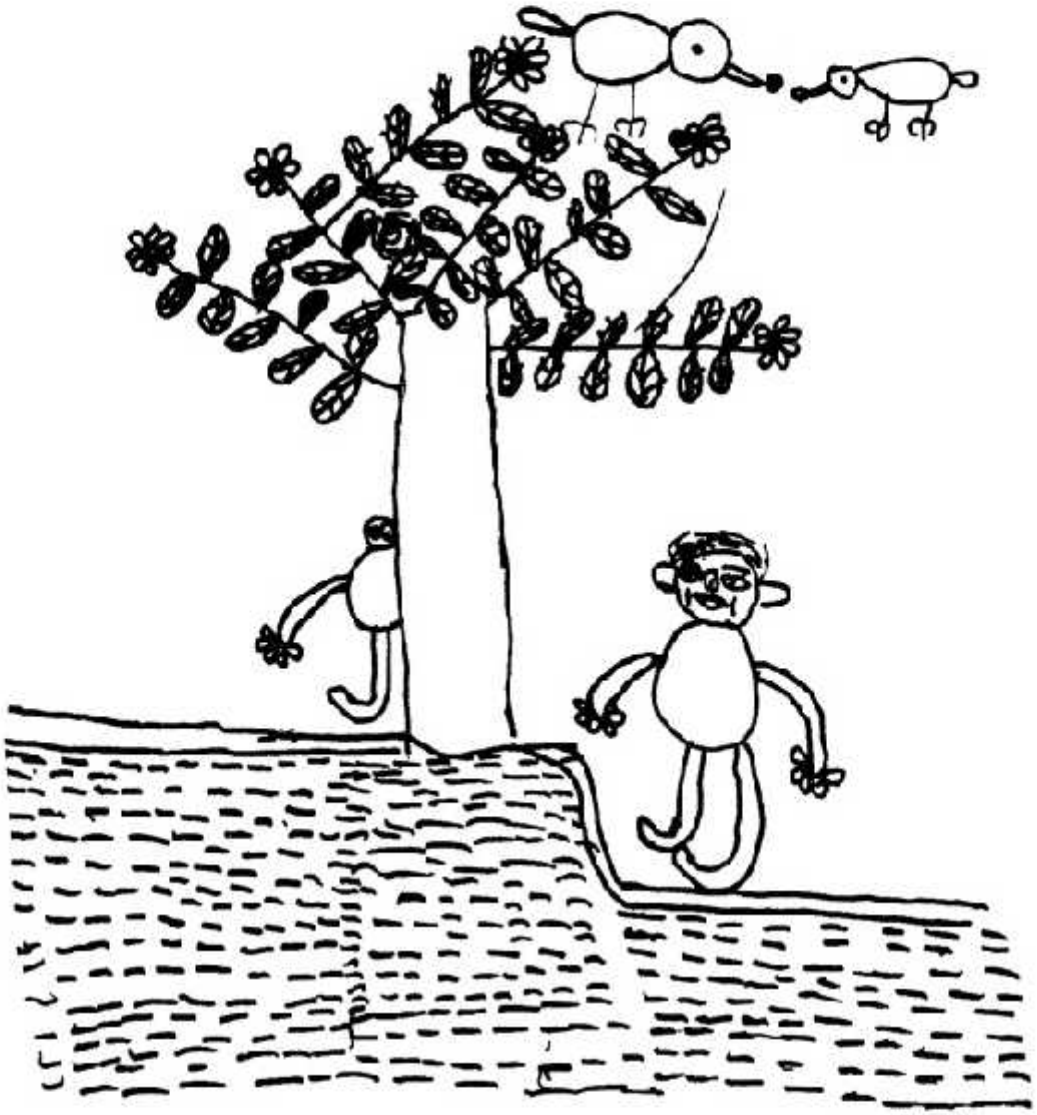

आरती चौहान

जब मैं कक्षा पाँचवीं में पढ़ता था और छोटा भाई चौथी में था। हम दोनों साथ-साथ स्कूल जाते थे।

स्कूल और हमारे घर के रास्ते में एक इमली का पेड़ था। लड़के उस पर चढ़कर इमलियाँ तोड़कर खाया करते थे।

हमारे विद्यालय में हर शनिवार बालसभा का आयोजन होता था। बालसभा में सभी छात्र-छात्राओं का बोलना आवश्यक होता था। उस रोज़ हमें याद नहीं था और बालसभा बैठ गई थी। गुरुजी का आना बाक़ी था। तभी मैंने और मेरे भाई ने प्लान बनाया कि अगर आज कुछ कविता या भाषण अपन ने नहीं बोला तो गुरुजी की मार खानी पड़ेगी। बस यह सोचकर हम दोनों भाई और कुछ दोस्त बालसभा से उठकर भाग गए।

हम लोग इमली के पेड़ के नीचे जमा हो गए। सबसे पहले मैं चढ़ा, फिर छोटा भाई फिर सभी दोस्त प्यारी-प्यारी, खट्टी-मिट्ठी इमली खाने को चढ़ गए।

थोड़ी इमली खाई और फिर एक डाल पर से दूसरी डाल पर कूदने लगे। अचानक मेरा पैर फिसल गया। मैं घबराने लगा और घबराहट में मेरे हाथ भी छूट गए। मैं डालियों में से अकटता हुआ जमीन पर जा गिरा। मेरे हाथ-पैर टूट गए। मेरे सभी दोस्त वहाँ से उतरकर रफूचक्कर हो गए। मैं रोता-चिल्लाता वहीं पड़ा रहा।

दोस्तों ने घर की बजाए स्कूल जाकर कक्षाध्यापक को बताया। अध्यापक जी मुझे उठाकर तुरन्त अस्पताल ले गए। और मैं दो माह बाद ठीक हो पाया।

अगर गुरुजी न मारते तो न भागते न गिरते। ●

विनोद परमार, दसवीं, रामा, झाबुआ, म.प्र.। आरती चौहान, टिमरनी, होशंगाबाद, म.प्र.। कहानी एवं चित्र चकमक अक्टूबर, 1990 में प्रकाशित।

रंगीन चिड़ी

❑ धन्नालाल बैरवा

हमारे घर के पिछवाड़े में एक पीपल का पेड़ है। मैं उसकी छाया में बैठा पढ़ रहा था। अचानक एक चिड़ी ने मेरे ऊपर बीट कर दी। मेरे को बहुत क्रोध आया, लेकिन करता क्या? अचानक एक बात मेरे दिमाग़ में आई। एक परांती लेकर उसे एक लकड़ी की सहायता से खड़ा किया। लकड़ी को एक रस्सी से बाँध दिया। परांती के नीचे और आस-पास चुग्गा डाल दिया। रस्सी को पकड़कर पेड़ की ओट में छिप गया।

बहुत से पक्षी वहाँ चुग्गा चुगने आ गए। एक चिड़ी परांती की छाया में परांती के नीचे चुग्गा चुगने लगी। मैंने रस्सी को खींचा। चिड़ी परांती के नीचे दब गई। चिड़ी को पकड़कर उसे अनेक रंगों से रंगकर और एक काग़ज़ में अपना पता लिखकर चिड़ी के गले में बाँध दिया।

कागज़ तो टूटकर गिर गया, लेकिन वह चिड़ी अब भी हमारे घर के आसपास ही रहती है। वह चिड़ियों के बीच में बैठी हुई ऐसी लगती है मानो सब पर हुक्म चला रही हो। सब उसे रंगीन चिड़ी कहते हैं। ●

धन्नालाल बैरवा, मंडोर, जयपुर, राजस्थान। चकमक जुलाई, 1991 में प्रकाशित।
नज़ना बी, हिरणखेड़ा, होशंगाबाद, म.प्र.।

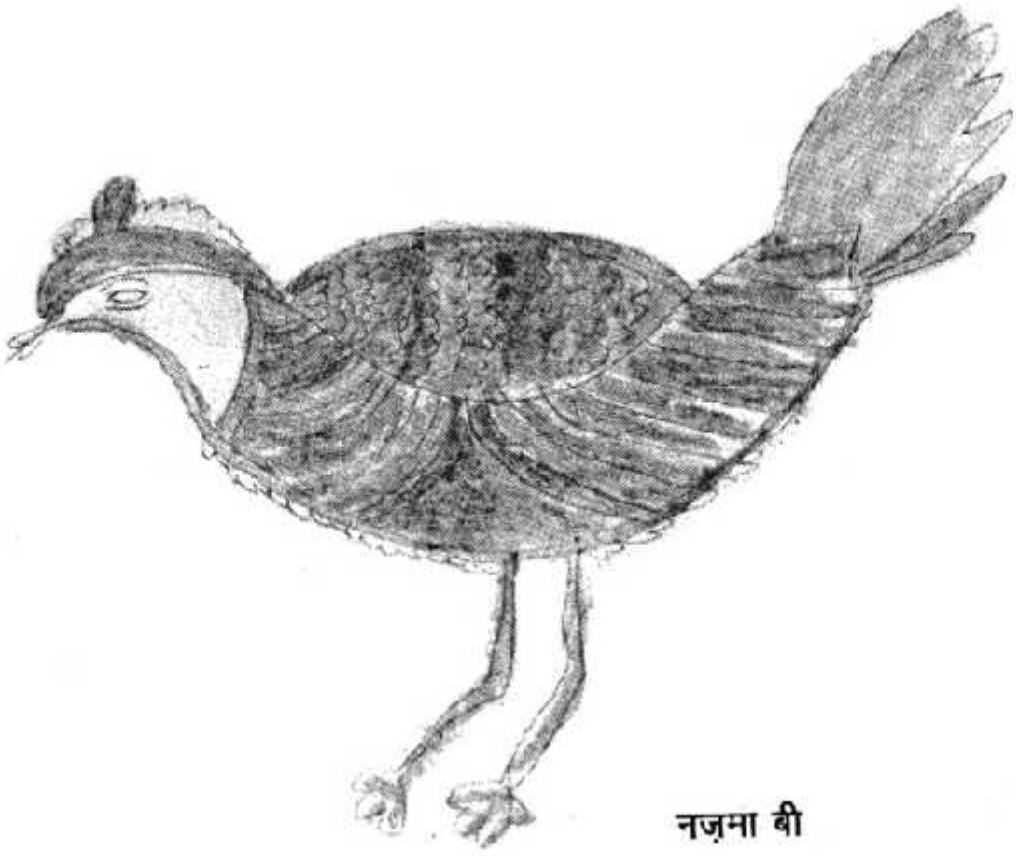

नज़मा बी

भूठी-मूठी

❑ गजेन्द्र सिंह ठाकुर

एक दिन की बात है भैया होरे पानी गिर रओ थो। मैंने सोची आज तो इत्तो पानी गिर रओ है। आज की छुट्टी हुहै।

तई मैंने मेरे कक्का से पूछी। कक्का ने मोहे डाँट दओ मैं रोने लगो। मोसे फिर स्कूल जात नहीं बनो।

गैल में मैंने सोची आज स्कूल नहीं जाऊँ मेरे दोस्त है बस्ता दे दओ। और मैं कीचड़ में सो गओ। मेरे दोस्त ने समझी जाहे चक्कर आ गओ। वो दौड़ते मेरे घर गओ मैं उठके आनंद हुनों के घर भग गओ। मेरी बाई उनके घरे आ गई। और मोहे बहुत मारो। मैंने घर तन दौड़ लगा दई। ●

गजेन्द्र सिंह ठाकुर, चौथी, पिपरिया, होशंगाबाद, म.प्र.। बाल चिरैया (पिपरिया) त चकमक जुलाई, 1990 में प्रकाशित। लोकमणि शर्मा, छठवीं, सोहाग् होशंगाबाद, म.प्र.।

लोकमणि शर्मा

खेल खेल में

❑ देवकरण पाटीदार

स्कूल लगने में देर थी। सब खेल रहे थे। मैं भी खेल खेलने के लिए गया तो मुझे कोई नहीं खिला रहा था। मुझे बहुत दुख हुआ। मैं एक जगह बैठकर सोच रहा था कि स्कूल क्यों नहीं लग रहा है। थोड़ी देर में स्कूल लग गया। मैं सोचता ही रह गया। थोड़ी देर बाद मेरे टीचर ने देखा तो मुझे डाँटा और मुझे कमरे में ले गए। थोड़ी देर में टन-टन-टन की आवाज़ सुनाई दी। सब बच्चे अपने-अपने घर चले गए। मैं यहीं रह गया। फिर टीचर ने कहा, 'तुम इतने उदास क्यों हो?'

मैंने डरते-डरते कहा, 'मुझे कोई नहीं खिलाता है।'

टीचर ने पूछा, 'तुम्हें क्यों नहीं खिलाते हैं?'

'मुझे मालूम नहीं।'

'ठीक है, तुम घर जाओ।'

मैं घर आ गया। मेरा मन किसी भी काम में नहीं लग रहा था। तो मम्मी ने पूछा, 'तुम इतने उदास क्यों हो?'

मैंने कहा, 'मम्मी, मुझे कोई नहीं खिलाता है।'

मम्मी ने कहा, 'इसमें उदास होने की क्या बात है? मैं सब बच्चों से कह दूँगी कि मेरे बच्चे को भी खेल खिलाया करो।'

दूसरे दिन मैं स्कूल गया तो मेरे दोस्त मुझे पकड़कर खेल के मैदान में ले गए। मैं भी खेलने लगा। उस दिन मुझे बहुत खुशी हुई। ●

मुखविन्दर सिंह कौर

देवकरण पाटीदार, नेवरी, देवास, म.प्र.। मुखविन्दर सिंह कौर, हरदा, म.प्र.।
कहानी तथा चित्र चकमक अक्टूबर, 1991 में प्रकाशित।